International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor- 5.414, Volume 5, Issue 1, January 2018
Website- www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

अलङ्कार : महत्त्व, सामान्य स्वरूप और भेद

डॉ० भवानीशंकर शर्मा 'महाजनीय'

अलङ्कारों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन हैं। वेदों में भी अनेकअलङ्कारों का प्रयोग हुआ है। **ऋग्वेद** मेंउपमा,अतिशयोक्ति,व्यतिरेकजैसे अर्थालङ्कारों का अत्यन्त स्वाभाविकप्रवाह में प्रयोग मिलता है।उत्प्रेक्षा,अनुप्रास,पुनरुक्तवदाभास,रूपकादिअर्थालङ्कारों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में हुआ है। तत्पश्चात्**ब्राह्मण,उपनिषद्,रामायण,महाभारत** आदि तो अर्थालङ्कारों से भरे पड़े हैं। प्राचीन काल मेंअर्थालङ्कारोंको **काव्यात्मा** के रूप में देखा जाता रहा था। शनै:शनै: उसका आत्मस्थानीय स्वरूप नष्ट हो गया। **आनन्दवर्धन,मम्मट** आदि ने अलङ्कारों को **बाह्य** तत्त्वों के रूप में देखा। शब्दार्थरूप शरीर की **कटककुण्डलादिवत्** शोभावर्द्धकतत्त्व **अलङ्कार** कहलाते हैं—ऐसी अवधारणा विकसित हुई और आत्मतत्त्व के रूप में **ध्वनि** की मान्यता हुई।

अलङ्कार का महत्त्व एवं स्वरूप—

काव्यकारों व काव्यशास्त्रियों ने **कविता** को **वनिता** कहकर अलङ्कारोंको **आभूषण** के रूप में देखा है। **भामह** **काव्यालङ्कार** में लिखते हैं—"अलङ्कारों से युक्तकवियों की वाणी आभूषणों से विभूषित नारी -समान शोभा पाती हैं"—

गिरामलङ्कारविधि: सविस्तरःस्वयं विनिश्चित्य धिया मयोदितः।
अनेन वागर्थविदामलङ्कृताविभाति नारीव विदग्धमण्डना॥

(काव्यालङ्कार,३.५८)

आचार्य **वामन** ने इसी कथ्य को प्रकारान्तर से कहा है— "गुण कविता का युवती के रूप में सौन्दर्य की तरह सनातन धर्म है और अलङ्कार उसी प्रकार विकल्प धर्म है;जैसे युवती के देह में आभूषण"—

युवतेरिव रूपमङ्ग ! काव्यं स्वदते शुद्धगुणं तदप्यनीक।
विहितप्रणयंनिरन्तराभिः सदलङ्कारविकल्पकल्पनाभिः॥

(काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति:,३.१.२)

कविता को **वनिता** की समता देकर प्रधानता प्रदान की गई है और युवती के शरीर पर गहनों के समान कहकर अलङ्कारों को गौणता प्रदान की गई है। **जयदेव** ने **चन्द्रालोक** में अलङ्कारों को पुनः प्रधानता देने का प्रयास किया,किन्तु यथार्थ में अलङ्कारों का स्थान वह नहीं है ;जैसा उन्होंने **धर्म** के रूप में स्वीकार किया है। वे कहते है— जो यह स्वीकार करते हैं कि अलङ्कारशून्य भी शब्दार्थ **काव्य** होता है ,वे यह क्यों नहीं स्वीकार करते की बिना उष्णता के ही **अग्नि** का जलना होता है—

अङ्गीकरोति य: काव्यं शब्दार्थावनलङ्कृती।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलङ्कृती॥(चन्द्रालोक,१.८)

जयदेव के अनुसार अलङ्कार काव्य काआत्मस्थानीय तत्व है—**धर्म**।उष्णता अग्नि का नित्य धर्म है,वैसे ही अलङ्कार काव्य का धर्म है। किन्तु यह मत तो स्वयं उनके द्वारा ही खण्डित हो जाता है ,जब वे कहते हैं—"हार आदि आभूषणों के समान अलङ्कार का मनोहर सन्निवेश काव्य में होता है"—**हारादिवदलङ्कारः सन्निवेशो मनोहरः।**

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

आचार्य **दण्डी** ने अलङ्कार का परिष्कृत लक्षण देने का प्रयास किया है ;किन्तु उसमें भी काव्य -धर्म के रूप में अलङ्कारों को कहना युक्तिसङ्गत नहीं है। वे कहते हैं "काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्मों को **अलङ्कार**कहा जाता है"—

काव्यशोभाकरान् धर्मानलङ्कारान् प्रचक्षते। (काव्यादर्श-२.१)

वस्तुतः काव्य में **अलङ्कार धर्म** के रूप मे नहीं हो सकते हैं। धर्म होने पर तो **काव्य धर्मी** सिद्ध होगा ,वह भी **अलङ्कारों** के कारण। किन्तु काव्य में कहीं-कहीं **अलङ्कार** नहीं भी देखे जाते अथवा उनके होते हुए भी काव्य की शोभा नहीं बढ़ती ;अपितु अपकर्ष को प्राप्तहोती है। फिर भी **काव्य** की शोभा में **आत्मारूप ध्वनि** या **व्यङ्ग्य** में अभिवृद्धि भी करते ही हैं ;अतः उनके होने पर यदि काव्य की शोभा बढ़ती है तो ,उन्हें **अलङ्कार**कहना चाहिए। शोभावर्धकहोकर ही **अलङ्कार**नाम सार्थकहो सकता है। इस सम्बन्ध में आचार्य **मम्मट** का लक्षण ही युक्तियुक्त लगता है—

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्।
हारादि - वदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादय:॥(८.६७,काव्यप्रकाश:)

अर्थात् जो काव्य में विद्यमान उस **अङ्गी रस** को शब्द और अर्थरूप अङ्गों द्वारा कभी-कभी उत्कर्षयुक्त करते हैं ,वे **अनुप्रास** तथा **उपमा** आदि **हार** आदि आभूषणों के समान होने से **अलङ्कार**कहे जाते हैं।

इस**अलङ्कार-लक्षण**केअनुसार**अलङ्कार**धर्म-स्थानीयनहींहोसकते।**गुण**या**धर्म** होनेकेलिएरसोत्कर्षकता व रसनिष्ठता—इनदोधर्मोंकासमावेशहोनाआवश्यकहोता है।अर्थात् **रसोत्कर्षता** के होने पर रस कीअव्यभिचारिता **— रसोत्कर्षकत्वे सति रसाव्यभिचारित्वम्** तथाअव्यभिचार से रस की उपकारकता गुणत्व होता है— **अव्यभिचारिता** नहीं है और न ही वे **अव्यभिचार** से इसके उपकारकहोते हैं। अतः अलङ्कारों में उपर्युक्त गुण-लक्षण की अभिव्यक्ति नहीं होती है। काव्यगुणरूपी **धर्म** तो काव्यात्मभूत **अङ्गीरस** के नित्य उत्कर्षाधायकऔर अचलस्थिति वाले होते हैं। अतः **अलङ्कार** तो साधन मात्र हैं ,**साध्य** नहीं। ये शब्दार्थरूप शरीर की कभी-कभी शोभा बढ़ाकर उनके आत्मतत्त्व **रस** के उपकार करने वाले होते हैं। **अलङ्क्रियते अनेनइत्यलङ्कारः** या**अलङ्कृतिः अलङ्कारः** , यहाँ (**अलम्कृ+घञ्**)करणार्थकऔर भावार्थक**घञ्**प्रत्यय होने से दो व्युत्पत्तियाँ की गई हैं।

अलङ्कार-भेद—

अलङ्कारशास्त्र-जगत् में अलङ्कारों के भेद को लेकर बहुत पृथक्-पृथक् मत प्राप्त होते हैं, किसी आचार्य ने अलङ्कारों की संख्या चार ही कही है, तो अन्य ने उनकी संख्या १२५ तकपहुँचा दी है । यह नए-नए अलङ्कारों के अनुसन्धान की यह परम्परा अनवरत रूप से चल रही है और चलती रहेगी, इसलिए अलङ्कार कितने प्रकार के हैं? इसका ठीक-ठीक कथन कर देना बड़ा मुश्किल है । फिर भी, मुख्य भेद तो सबने लगभग समान ही माने हैं, क्योंकि कोई भी **अलङ्कार**मुख्य रूप से तीन प्रकार के चमत्कारों में से किसी एक का स्वयं में समावेश रखता है। यानी शब्द, अर्थ या शब्दार्थ के चमत्कार में से कोई एक तो उनमें निहित रहता है, अतः ये तीन प्रधान भेद तो सर्वग्राह्य हैं—

(क)**शब्दालङ्कार,**
(ख) **अर्थालङ्कार** तथा
(ग) **उभयालङ्कार**

(क)**शब्दालङ्कार—**रचना (काव्य) का चमत्कार या माधुर्य जब विशिष्ट शब्दों या वर्णों के प्रयोग में निहित होता है,अर्थों में नहीं,तब वहाँ**शब्दालङ्कार** होता है। उस विशिष्ट शब्द को हटाकर उसका पर्यायवाची शब्द रख देने पर जब वह चमत्कार नहीं रह पाता है, तो समझ लेना चाहिए कि वहाँ शब्दालङ्कार है।

(ख) **अर्थालङ्कार—**जब काव्य में चमत्कार या सौन्दर्य अर्थ पर अवलम्बित हो ,तब वहाँ **अर्थालङ्कार** होता है। यानी काव्य में प्रयुक्त शब्दों के पर्यायवाची रख देने पर भी जहाँ वही चमत्कार बना रहता है ,तब वहाँ **अर्थालङ्कार** जानना चाहिए।

(ग) **उभयालङ्कार—** जहाँ **शब्दालङ्कार** और **अर्थालङ्कार** दोनों स्थित होते हैं अर्थात् दोनों अलङ्कार चमात्काराधायकहोते हैं,वहाँ **उभयालङ्कार** होता है। कुछ विद्वान् अलङ्कारोंको केवल दो भागो में ही बाँटते है— (क)**शब्दालङ्कार** (ख) **अर्थालङ्कार**।

शब्दगत अलङ्कार—शब्दालङ्कारों में अनुप्रास,यमक, श्लेष का प्रमुख रूप से ग्रहण किया जाता है। आचार्य **मम्मट** ने छह शब्दालङ्कार माने हैं—१.**वक्रोक्ति** २.**अनुप्रास** ३.**यमक**४.**श्लेष** ५.**चित्र** और६.**पुनरुक्तवदाभास**।

अर्थगत अलङ्कार— उपमाआदि अलङ्कारों की संख्या अधिकतम १२४तकपहुँचा दी गई थी। ऐसा करनेवाले कुवलयानन्दकार **अप्पयदीक्षित** थे।पीयूषवर्षी **जयदेव** ने **चन्द्रालोक** में कुल १००अलङ्कारमाने। आचार्य **मम्मट** ने कुल६८अलङ्कारमाने हैं।उनमें से ६१तोअर्थालङ्कारथे। अर्थालङ्कारों मेंउपमा,अनन्वय,उपमेयोपमा,रूपक,अपह्नुतिआदि की गणना होती है। आचार्य**मम्मट** नेपुनरुक्तवदाभासकोउभयालङ्कारमाना था।

---***---***---

राजकीय लोहिया महाविद्यालय, चूरू (राजस्थान)